अनुमान

अनुमान शब्दके अनुमिति और अनुमितिकरण ऐसे दो अर्थ हैं। जब अनुमान शब्द भाववाची हो तब अनुमिति और जब करणवाची हो तब अनुमितिकरण अर्थ निकलता है।

अनुमान शब्दमें अनु और मान ऐसे दो अंश हैं। अनुका अर्थ है पश्चात् और मानका अर्थ है ज्ञान अर्थात् जो किसी अन्य ज्ञानके बाद ही होता है वह अनुमान। परन्तु वह अन्य ज्ञान खास ज्ञान ही विवक्षित है, जो अनुमितिका कारण होता है। उस खास ज्ञान रूपसे व्याप्तिज्ञान—जिसे लिङ्गपरामर्श भी कहते हैं—इष्ट है। प्रत्यक्ष और अनुमान ज्ञानमें मुख्य एक अन्तर यह भी है कि प्रत्यक्ष ज्ञान नियमसे ज्ञानकारणक नहीं होता, जब कि अनुमान नियमसे ज्ञानकारणक ही होता है। यही भाव अनुमान शब्दमें मौजूद 'अनु' अंशके द्वारा सूचित किया गया है। यद्यपि प्रत्यक्षभिन्न दूसरे भी ऐसे ज्ञान हैं जो अनुमान कोटिमें न गिने जाने पर भी नियमसे ज्ञानजन्य ही हैं; जैसे उपमान शाब्द, अर्थापत्ति आदि; तथापि दर असलमें जैसा कि वैशेषिक दर्शन तथा बौद्ध दर्शन में माना गया है—प्रमाण के प्रत्यक्ष और अनुमान ऐसे दो ही प्रकार हैं। बाकी के सब प्रमाण किसी न किसी तरह अनुमान प्रमाणमें समाए जा सकते हैं जैसा कि उक्त द्विप्रमाणवादी दर्शनोंने समाया भी है।

अनुमान किसी भी विषयका हो, वह किसी भी प्रकारके हेतुसे जन्य क्यों न हो पर इतना तो निश्चित है कि अनुमानके मूलमें कहीं न कहीं प्रत्यक्ष ज्ञानका अस्तित्व अवश्य होता है। मूलमें कहीं भी प्रत्यक्ष न हो ऐसा अनुमान हो ही नहीं सकता। जब कि प्रत्यक्ष अपनी उत्पत्तिमें अनुमानकी अपेक्षा कदापि नहीं रखता तब अनुमान अपनी उत्पत्तिमें प्रत्यक्षकी अपेक्षा अवश्य रखता है। यही भाव न्यायसूत्रगत अनुमानके लक्षणमें[1] 'तत्पूर्वकम्' (१.१.५)

---

१. जैसे 'तत्पूर्वक' शब्द प्रत्यक्ष और अनुमानका पौर्वापर्य प्रदर्शित करता है वैसे ही जैन परम्परामें मति और श्रुतसंज्ञक दो ज्ञानोंका पौर्वापर्य बतलानेवाला 'मइपुव्वं जेण सुयं' (नन्दी सू० २४) यह शब्द है। विशेषा० गा० ८६, १०५, १०६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शब्दसे ऋषिने व्यक्त किया है, जिसका अनुसरण सांख्यकारिका (का० ५) आदिके अनुमान लक्षणमें भी देखा जाता है।

अनुमानके स्वरूप और प्रकार निरूपण आदिका जो दार्शनिक विकास हमारे सामने है उसे तीन युगोंमें विभाजित करके हम ठीक-ठीक समझ सकते हैं १ वैदिक युग, २ बौद्ध युग और ३ नव्यन्याय युग।

१—विचार करनेसे जान पड़ता है कि अनुमान प्रमाणके लक्षण और प्रकार आदिका शास्त्रीय निरूपण वैदिक परम्परामें ही शुरू हुआ और उसीकी विविध शाखाओंमें विकसित होने लगा। इसका प्रारंभ कब हुआ, कहाँ हुआ, किसने किया, इसके प्राथमिक विकासने कितना समय लिया, वह किन किन प्रदेशोंमें सिद्ध हुआ इत्यादि प्रश्न शायद सदा ही निरुत्तर रहेंगे। फिर भी इतना तो निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि इसके प्राथमिक विकासका ग्रन्थन भी वैदिक परंपराके प्राचीन अन्य ग्रन्थोंमें देखा जाता है।

यह विकास वैदिकयुगीन इसलिए भी है कि इसके प्रारम्भ करनेमें जैन और बौद्ध परम्पराका हिस्सा तो है ही नहीं बल्कि इन दोनों परम्पराओंने वैदिक परम्परासे ही उक्त शास्त्रीय निरूपणको शुरूमें अक्षरशः अपनाया है। यह वैदिकयुगीन अनुमान निरूपण हमें दो वैदिक परम्पराओंमें थोड़े बहुत हेर-फेरके साथ देखनेको मिलता है।

(अ) वैशेषिक और मीमांसक परम्परा—इस परम्पराको स्पष्टतया व्यक्त करनेवाले इस समय हमारे सामने प्रशस्त और शाबर दो भाष्य हैं। दोनोंमें अनुमानके दो प्रकारोंका ही उल्लेख है[1] जो मूलमें किसी एक विचार परम्पराका सूचक है। मेरा निजी भी मानना है कि मूलमें वैशेषिक और मीमांसक दोनों परम्पराएँ कभी अभिन्न थीं[2], जो आगे जाकर क्रमशः जुदी हुईं और भिन्न-भिन्न मार्गसे विकास करती गईं।

(ब) दूसरी वैदिक परम्परामें न्याय, सांख्य और चरक इन तीन शास्त्रों-

---

१. 'तत्तु द्विविधम्—प्रत्यक्षतो दृष्टसम्बन्धं सामान्यतो दृष्टसम्बन्धं च'—शाबरभा० १. १. ५। एतत्तु द्विविधम्—दृष्टं सामान्यतो दृष्टं च'—प्रशस्त० पृ० २०५।

२. मीमांसा दर्शन 'अथातो धर्मजिज्ञासा'में धर्मसे ही शुरू होता है वैसे ही वैशेषिक दर्शन भी 'अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः' सूत्रमें धर्मनिरूपणसे शुरू होता है। 'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः' और 'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्' दोनोंका भाव समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का समावेश है। इनमें अनुमानके तीन प्रकारोंका उल्लेख व वर्णन है[1]। वैशेषिक तथा मीमांसक दर्शनमें वर्णित दो प्रकारके बोधक शब्द करीब करीब समान हैं, जब कि न्याय आदि शास्त्रोंकी दूसरी परम्परामें पाये जानेवाले तीन प्रकारोंके बोधक शब्द एक ही हैं। अलबत्ता सब शास्त्रोंमें उदाहरण एकसे नहीं हैं।

जैन परम्परामें सबसे पहिले अनुमानके तीन प्रकार अनुयोगद्वारसूत्रमें—जो ई० स० पहली शताब्दीका है—ही पाये जाते हैं,[2] जिनके बोधक शब्द अक्षरशः न्यायदर्शनके अनुसार ही हैं। फिर भी अनुयोगद्वार वर्णित तीन प्रकारोंके उदाहरणोंमें इतनी विशेषता अवश्य है कि उनमें भेद-प्रतिभेद रूपसे वैशेषिक-मीमांसक दर्शनवाली द्विविध अनुमानकी परम्पराका भी समावेश हो ही गया है।

बौद्ध परम्परामें अनुमानके न्यायसूत्रवाले तीन प्रकारका ही वर्णन है जो एक मात्र उपायहृदय (पृ० १३) में अभी तक देखा जाता है। जैसा समझा जाता है, उपायहृदय अगर नागार्जुनकृत नहीं हो तो भी वह दिङ्नागका पूर्ववर्ती अवश्य होना चाहिए। इस तरह हम देखते हैं कि ईसाकी चौथी पाँचवीं शताब्दी तकके जैन-बौद्ध साहित्यमें वैदिक युगीन उक्त दो परम्पराओंके अनुमान वर्णनका ही संग्रह किया गया है। तब तकमें उक्त दोनों परम्पराएँ मुख्यतया प्रमाणके विषयमें खासकर अनुमान प्रणालीके विषयमें वैदिक परम्पराका ही अनुसरण करती हुई देखी जाती हैं।

२–ई० स० की पाँचवीं शताब्दीसे इस विषयमें बौद्धयुग शुरू होता है। बौद्धयुग इसलिये कि अब तकमें जो अनुमान प्रणाली वैदिक परम्पराके अनुसार ही मान्य होती आई थी उसका पूर्ण बलसे प्रतिवाद करके दिङ्नागने अनुमान का लक्षण स्वतन्त्र भावसे रचा[3] और उसके प्रकार भी अपनी बौद्ध दृष्टिसे बतलाए। दिङ्नागके इस नये अनुमान प्रस्थानको सभी उत्तरवर्ती बौद्ध विद्वानोंने

---

१ 'पूर्ववच्छेषवत्सामान्यतो दृष्टं च' न्यायसू० १.१.५। माठर० का० ५। चरक० सूत्रस्थान श्लो० २८, २९।

२ 'तिविहे पण्णत्ते तंजहा—पुव्ववं, सेसवं, दिट्ठसाहम्मवं।'—अनुयो० पृ० २१२A।

३ प्रमाणसमु० २. १. Buddhist Logic. Vol. I. p. 236.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनाया[1] और उन्होंने दिङ्नागकी तरह ही न्याय आदि शास्त्र सम्मत वैदिक परम्पराके अनुमान लक्षण, प्रकार आदिका खण्डन किया[2] जो कि कभी प्रसिद्ध पूर्ववर्ती बौद्ध तार्किकोंने खुद ही स्वीकृत किया था। अबसे वैदिक और बौद्ध तार्किकोंके बीच खण्डन-मण्डनकी खास आमने-सामने छावनियाँ बन गईं। वात्स्यायनभाष्यके टीकानुटीकाकार उद्योतकर, वाचस्पति मिश्र आदिने वसुबन्धु, दिङ्नाग, धर्मकीर्ति आदि बौद्ध तार्किकोंके अनुमानलक्षणप्रणयन आदिका जोर-शोरसे खण्डन किया जिसका[3] उत्तर क्रमिक बौद्ध तार्किक देते गए हैं।

बौद्धयुगका प्रभाव जैन परम्परा पर भी पड़ा। बौद्धतार्किकोंके द्वारा वैदिक परम्परासम्मत अनुमान लक्षण, भेद आदिका खण्डन होते और स्वतन्त्रभावसे लक्षणप्रणयन होते देखकर सिद्धसेन[4] जैसे जैन तार्किकोंने भी स्वतन्त्रभावसे अपनी दृष्टिके अनुसार अनुमानका लक्षणप्रणयन किया। भट्टारक अकलङ्कने उस सिद्धसेनीय लक्षणप्रणयन मात्रमें ही सन्तोष न माना। पर साथ ही बौद्ध-तार्किकोंकी तरह वैदिक परम्परा सम्मत अनुमानके भेद प्रभेदोंके खण्डनका सूत्रपात भी स्पष्ट किया[5] जिसे विद्यानन्द आदि उत्तरवर्ती दिगम्बरीय तार्किकोंने विस्तृत व पल्लवित किया[6]।

नए बौद्ध युग के दो परिणाम स्पष्ट देखे जाते हैं। पहिला तो यह कि बौद्ध और जैन परम्परामें स्वतन्त्र भावसे अनुमान लक्षण आदिका प्रणयन और अपने ही पूर्वाचार्योंके द्वारा कभी स्वीकृत वैदिक परम्परा सम्मत अनुमानलक्षण विभाग आदिका खण्डन। दूसरा परिणाम यह है कि सभी वैदिक विद्वानोंके द्वारा बौद्ध सम्मत अनुमानप्रणालीका खण्डन व अपने पूर्वाचार्य सम्मत अनुमान प्रणालीका स्थापन। पर इस दूसरे परिणाममें चाहे गौण रूपसे ही सही एक बात यह भी उल्लेख योग्य दाखिल है कि भासर्वज्ञ जैसे वैदिक परम्पराके किसी

---

१ 'अनुमानं लिङ्गादर्थदर्शनम्'—न्यायप्र० पृ० ७। न्यायबि० २. ३। तत्त्वसं० का० १३६२।

२ प्रमाणसमु० परि० २। तत्त्वसं० का० १४४२। तात्पर्य० पृ० १८०।

३ न्यायवा० पृ० ४६। तात्पर्य० पृ० १८०।

४ 'साध्याविनाभुनो लिङ्गात्साध्यनिश्चायकं स्मृतम्। अनुमानम्'—न्याया० ५।

५ न्यायवि० २. १७१, १७२।

६ तत्त्वार्थश्लो० पृ० २०५। प्रमेयक० पृ० १०५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तार्किकके लक्षण प्रणयनमें बौद्ध लक्षणका भी असर आ गया[1] जो जैन तार्किकोंके लक्षण प्रणयनमें तो बौद्धयुगके प्रारम्भसे ही आज तक एक-सा चला आया है[2]।

३—तीसरा नव्यन्याययुग उपाध्याय गंगेशसे शुरू होता है। उन्होंने अपने वैदिक पूर्वाचार्योंके अनुमानलक्षणको कायम रखकर भी उसमें सूक्ष्म परिष्कार[3] किया जिसका आदर उत्तरवर्ती सभी नव्य नैयायिकोंने ही नहीं बल्कि सभी वैदिक दर्शनके परिष्कारकोंने किया। इस नवीन परिष्कारके समयसे भारतवर्षमें बौद्ध तार्किक करीब-करीब नामशेष हो गए। इसलिए बौद्ध ग्रन्थोंमें इसके स्वीकार या खण्डनके पाये जानेका तो सम्भव ही नहीं पर जैन परम्पराके बारेमें ऐसा नहीं है। जैन परम्परा तो पूर्वकी तरह नव्यन्याययुगसे आज तक भारतवर्षमें चली आ रही है और यह भी नहीं कि नव्यन्याययुगके मर्मज्ञ कोई जैन तार्किक हुए भी नहीं। उपाध्याय यशोविजयजी जैसे तत्त्वचिन्तामणि और आलोक आदि नव्यन्यायके अभ्यासी सूक्ष्मप्रज्ञ तार्किक जैन परम्परामें हुए हैं फिर भी उनके तर्कभाषा जैसे ग्रन्थमें नव्यन्याययुगीन परिष्कृत अनुमान लक्षणका स्वीकार या खण्डन देखा नहीं जाता। उपाध्यायजीने भी अपने तर्कभाषा जैसे प्रमाण विषयक मुख्य ग्रन्थमें अनुमानका लक्षण वही रखा है जो सभी पूर्ववर्ती श्वेताम्बर दिगम्बर तार्किकोंके द्वारा मान्य किया गया है।

आचार्य हेमचन्द्रने अनुमानका जो लक्षण किया है वह सिद्धसेन और अकलङ्क आदि प्राक्तन जैन तार्किकोंके द्वारा स्थापित और समर्थित ही रहा। इसमें उन्होंने कोई सुधार या न्यूनाधिकता नहीं की। फिर भी हेमचन्द्रीय अनुमान निरूपणमें एक ध्यान देने योग्य विशेषता है। वह यह कि पूर्ववर्ती सभी जैन तार्किकोंने—जिनमें अभयदेव, वादी देवसूरि आदि श्वेताम्बर तार्किकों का भी समावेश होता है—वैदिक परम्परा सम्मत त्रिविध अनुमान प्रणालीका साटोप खण्डन[4] किया था, उसे आ० हेमचन्द्र ने छोड़ दिया। यह हम नहीं

---

१ 'सम्यगविनाभावेन परोक्षानुभवसाधनमनुमानम्'—न्यायसार पृ० ५।

२ न्याया० ५। न्यायवि० २. १। प्रमाणप० पृ० ७०। परी० ३. १४।

३ 'अतीतानागतधूमादिज्ञानेऽप्यनुमितिदर्शनान्न लिङ्गं तद्धेतुः व्यापारपूर्ववर्तितयोरभावात्......किन्तु व्याप्तिज्ञानं करणं परामर्शो व्यापारः'—तत्त्वचि० परामर्श पृ० ५३६-५०।

४ सन्मतिटी० पृ० ५५६। स्याद्वादर० पृ० ५२७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कह सकते कि हेमचन्द्रने संक्षेपरुचिकी दृष्टिसे उस खण्डनको जो पहिलेसे बराबर जैन ग्रन्थोंमें चला आ रहा था छोड़ा, कि पूर्वापर असंगतिकी दृष्टिसे। जो कुछ हो, पर आचार्य हेमचन्द्रके द्वारा वैदिक परम्परा सम्मत अनुमान त्रैविध्यके खण्डनका परित्याग होनेसे, जो जैन ग्रन्थोंमें खासकर श्वेताम्बरीय ग्रन्थोंमें एक प्रकारकी असंगति आ गई थी वह दूर हो गई। इसका श्रेय आचार्य हेमचन्द्र को ही है।

असंगति यह थी कि आर्यरक्षित जैसे पूर्वधर समझे जानेवाले आगमधर जैन आचार्यने न्याय सम्मत अनुमानत्रैविध्यका बड़े विस्तारसे स्वीकार और समर्थन किया था जिसका उन्हींके उत्तराधिकारी अभयदेवादि श्वेताम्बर तार्किकोंने सावेश खण्डन किया था। दिगम्बर परम्परामें तो यह असंगति इसलिए नहीं मानी जा सकती कि वह आर्यरक्षितके अनुयोगद्वारको मानती ही नहीं। अतएव अगर दिगम्बरीय तार्किक अकलङ्क आदिने न्यायदर्शन सम्मत अनुमानत्रैविध्यका खण्डन किया तो वह अपने पूर्वाचार्योंके मार्गसे किसी भी प्रकार विरुद्ध नहीं कहा जा सकता। पर श्वेताम्बरीय परम्पराकी बात दूसरी है। अभयदेव आदि श्वेताम्बरीय तार्किक जिन्होंने न्यायदर्शन सम्मत अनुमानत्रैविध्यका खण्डन किया, वे तो अनुमानत्रैविध्यके पक्षपाती आर्यरक्षितके अनुगामी थे। अतएव उनका वह खण्डन अपने पूर्वाचार्यके उस समर्थनसे स्पष्टतया मेल नहीं खाता।

आचार्य हेमचन्द्रने शायद सोचा कि श्वेताम्बरीय तार्किक अकलङ्क आदि दिगम्बर तार्किकोंका अनुसरण करते हुए एक स्वपरम्पराकी असंगतिमें पड़ गए हैं। इसी विचारसे उन्होंने शायद अपनी व्याख्यामें त्रिविध अनुमानके खण्डन-का परित्याग किया। सम्भव है इसी हेमचन्द्रोपज्ञ असंगति परिहारका आदर उपाध्याय यशोविजयजीने भी किया और अपने तर्कभाषा ग्रन्थमें वैदिक परम्परा सम्मत अनुमानत्रैविध्यका निरास नहीं किया, जब कि हेतुके न्यायसम्मत पाञ्चरूप्यका निरास अवश्य किया।

ई० १६३६] [प्रमाण मीमांसा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org